IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

स्वयं प्रकाश एवं असगर वजाहत की कहानियों में समाज के मुहावरे और भाषाई गरिमा

Ajit Kumar
Ph.D. Scholar
Veer Narmad South Gujarat University, Surat Gujarat

साहित्य समाज की भाषा में लिखा जाता है। समाज जिस भाषाई परिवेश में अपनी जिंदगी को जीता है उसी का अक्स समकालीन साहित्य में दिखाई देता है। भाषा के मानकीकरण का प्रश्न अपनी जगह है, परंतु समाज की बोलचाल और व्यवहार की भाषा अलग होती है। हिंदी भाषा में विविध भाषाओं के शब्दों और बोलियों का समिश्रण है। इसलिए हिंदी भाषा में लिखने वालों के पास शब्दों की एक बहुत बड़ी संपदा उपलब्ध है।

हिंदी साहित्य में आदि काल से लेकर वर्तमान समय के रचनाकारों ने अपने समय में प्रचलित लोक भाषा का उपयोग किया है। हम इस अध्यय में हिंदी कहनी की भाषा और भाषाई गरिमा का विश्लेषण करेंगे। इसके लिए यह जरुरी है कि हम परंपरागत साहित्यिक भाषा के मानक और शुद्तावादी दृष्टिकोण को समझ लें।

हिंदी भाषा में लिखने वाले सभी रचनाकारों के यहाँ उनकी स्थानीय भाषा का प्रभाव स्पष्टतः देखा जा सकता है। आदिकाल के रासो साहित्य की भाषा में जहाँ राजस्थानी भाषा के शब्दों को देखा जा सकता है वहीं भक्ति काल में अवधि और ब्रज का उत्कर्ष दिखाई देता है। रीति काल का साहित्य शुद्ध रूप से ब्रज बोली का उपयोग करता है और आधुनिक काल का पद्य तथा गद्य खड़ी बोली में अपनी अभिव्यक्ति करता है। साहित्य में भाषा की शुद्धता के प्रति सावधानी तुलसी, सूरदास और जायसी के यहाँ दिखाई देता है। यह बड़े रचनाकार की पहचान का मान भी है।

भाषाई गरिमा का सबसे पहला दौर महावीर प्रसाद द्विवेदी के समय में आता है जहाँ साहित्य की भाषा को अनुशाषित एवं मानक के रुप में होने का आग्रह है। तब से लेकर अभी तक हिंदी की सभी विधाओं में भाषा और शैली में व्यापक परिवर्तन दिखाई देता है।

हम इस अध्याय में असगर वजाहत एवं स्वयं प्रकाश के साहित्य में समाज के मुहावरे और भाषाई गरिमा का मूल्यांकन करेंगे। ये दोनों रचनाकार अपने भाषाई संस्कार अपने परिवेश से ग्रहण करते हैं तथा इनके परिवेश का अधिकांश भाग शहर का है। शहरी मध्य वर्ग की भाषा में साहित्य लिखने वाले किसी भी रचनाकार से यह अपेक्षा की जाती है कि वे अपने पाठकों की भाषा में ही अपनी रचना लिखें।

“दरअसल समस्या यह है कि आज हमारे चारों तरफ जो हो रहा है वह बड़ा अविश्वसनीय सा लगता है। कभी-कभी यह ख्याल आता है कि यह सब गलत है इतना भयंकर इतना गुरुर इतना निर्मम इतना लालची घर स्वार्थी मर्यादा और संस्कारहीन पशु से भी गिरा हुआ आदमी कैसे हो सकता है पर फिर भी यह भी ध्यान आता है कि जो कुछ हो रहा है वह सच्चाई है हम पतनशीलता के एक ऐसे दौर में आ गए हैं जिसकी

कल्पना करना भी कठिन है हम इतने हिंसक हो गए हैं इतने क्रोधी इतने लालची हो गए हैं कि हमारे लिए बड़े से बड़ा अपराध या हत्या कर देना कोई बड़ी बात नहीं बल्कि मजाक है लोगों की जिंदगी इतनी सस्ती तो शायद कभी ना रही होगी या कभी सोचा ना गया होगा कि ऐसा हो सकता है ऐसी स्थिति में शब्द कहां तक साथ देंगे अभिदान से तो काम चल नहीं सकता शब्द बने हो गए हैं और छोटे पड़ गए हैं।"[1]

असगर वजाहत मेरी प्रिय कहानी पुस्तक की भूमिका में यह बात लिखी है। जाहिर है रचनात्मक उदासी के युग में एक जीवित रचनाकार शब्दों की शक्ति को अपने सामने छोटा होते हुआ देख रहा है। अफसोस है कि अभिधा में वह कह नहीं सकता क्योंकि समाज इतने बुरे दौर में आ गया है। किसी भी रचनाकार के समक्ष यह चुनौती हमेशा से रही है कि वह अपनी रचना में कैसी भाषा का उपयोग करें। आदर्शवादी साहित्यकार भाषा के शुद्धतावादी रूप को महत्व देता है, जबकि यथार्थवादी रचनाकार अपनी रचनाओं में समाज में प्रचलित शब्दों मुहावरों और शब्द शक्तियों का उपयोग करता है। असगर वजाहत स्वयं लिखते हैं कि उनका समय पतन के गर्त में चला गया है। एक ऐसे समय में जहां जीना भी मुश्किल है वहां लिखना कितना मुश्किल रहा होगा। परंतु रचनाकार की खामोशी साहित्य के लिए बहुत खराब स्थिति है। असगर वजाहत ने हिंदू-मुस्लिम सांप्रदायिकता के दंगों में लहूलुहान समाज को चित्रित किया है और उनके आसपास के लोगों की भाषा में गाली-गलौज और भाषा का निम्न स्तर दिखाई देता है। इसीलिए असगर वजाहत की कहानियों में हम बड़े पैमाने पर गाली गलौज और मुहावरों का उपयोग देखते हैं।

असगर वजाहत के लेखन में उर्दू फारसी शब्दों का उपयोग स्वाभाविक है उन्होंने अपने समाज के भाषिक मुहावरों का भी उपयोग किया है 'शाह आलम कैंप के रूहें' कहानी में दंगे और खून-खराबे के बाद के चित्र को अभिव्यक्त करते हुए वे लिखते हैं- "शाह आलम कैंप में दिन तो किसी न किसी तरह गुजर जाते हैं लेकिन रातें कयामत की होती हैं ऐसी नफ्सा नफ्सी का आलम होता है कि अल्लाह बचाए।"[2]

असगर वजाहत भाषण मर्यादा को बनाए रखने के लिए कोई विशेष शरम नहीं करते हैं उनका मानना है की जो हमारे समाज में गालियां सरेआम दी और सुनी जाती हैं तो फिर इस साहित्य में उपयोग करने से भला क्या नुकसान हो सकता है समाज में गलियां चलती रहे और साहित्य में शालित बरती जाए यह ठीक बात नहीं। इसीलिए असगर वजाहत अपनी कहानियां के संग्रह में सबसे पहले अपने पाठकों से माफी मांग लेते हैं और लिखते हैं कि

"सबसे पहले आपसे माफी मांग लूं क्योंकि मेरी कहानी चिकनी चुपड़ी चुडैल सुंदर आकर्षक संवेदना से सरोवर नहीं है यह खुरदरी उबर खाबर उल्टी सीधी और कभी-कभी भयानक निराशा पैदा करने वाली कहानी है अगर आप केवल सुंदर कहानी पढ़ते हो तो इन्हें न पढ़ें।"[3]

इस तरह की आत्म स्वीकृति हिंदी कहानीकारों में बहुत कम देखी जाती है यह लेखक की ईमानदारी का प्रतीक मात्र नहीं है बल्कि आलोचना की जगत में इसे सत्य के साथ खड़े होने का साहस कहा जाता है।

जब हम समाज को समाज के हितों के लिए लिखते हैं तो हमें यह ध्यान रखना होता है कि हम अपनी भाषा में मर्यादित रहे परंतु असगर वजाहत इस विचारधारा से संभवत इत्तेफाक नहीं रखते बल्कि उनका ऐसा मानना है कि हिंदी कहानी या उपन्यास को समाज सुधारने का जिम्मेदारी नहीं दिया गया है जानकर या जिम्मेदारी दी गई है अगर अपनी भाषा के सबसे खराब दौर में पहुंच गए हैं तो फिर साहित्य से ऐसी उम्मीद करना ठीक बात नहीं है।

निष्कर्षित हम कह सकते हैं कि असगर वजाहत के साहित्य में समाज के यथार्थ रूप का चित्रण समाज की भाषा में ही किया गया है हम शहरी मध्य वर्ग के पाठकों की भाषा अक्सर सुनते हैं। उनकी भाषा में गाली गलौज होना एक आम बात है। अब तो आलम यह है की हिंदी समझ में गलियों के संक्षिप्त अक्षर मेक और बी का उपयोग धड़ले से हो रहा है इस बात में मुझे कोई आश्चर्य नहीं है की स्कूलों महाविद्यालय और विश्वविद्यालय में पढ़ने वाला और पढ़ने वाला दोनों अपनी भाषण गरिमा को केवल अपने कक्षा में ध्यान

रखना है वह जैसे ही कक्षा से बाहर आता है वह शहर और गली मोहल्ले की भाषा में गलियों का उपयोग धड़ले से करता है।

अतः हम कह सकते हैं कि असगर वजाहत ने अपने कहा कथा साहित्य में भाषाई गरिमा को जानबूझकर के बनाए रखने का कोई विशेष प्रयास नहीं किया है।

स्वयं प्रकाश समकालीन लेखन में बेहद प्रचलित और चर्चित रचनाकार हैं उनके कथा साहित्य में शहरी मध्य वर्ग की भाषा का उपयोग दिखाई देता है शहरी मध्य वर्ग की भाषा अंग्रेजियत और हिंदी के बीच की एक मिश्रित भाषा है जिसे वर्तमान में इंग्लिश कहा जाता है स्वयं प्रकाश अलग-अलग राज्यों में अलग-अलग विभागों में अलग-अलग पदों पर काम करने वाले रचनाकार रहे हैं उनके जीवन अनुभव इतने गहरे हैं कि उनमें भाषाओं की विविधता का होना स्वाभाविक है मुंबई उड़ीसा राजस्थान मध्य प्रदेश जैसे हिंदी राज्यों और ग्रामीण भारत के शब्दों को अपने साहित्य में स्थान देने वाले स्वयं प्रकाश अपने रचना प्रक्रिया में भाषा के उपयोग पर स्वयं असगर वजाहत की तुलना में कहीं अधिक सावधान नजर आते हैं और उन्होंने बाल साहित्य भी लिखा है संभवत यह एक बड़ी विशेषता है कि कोई भी रचनाकार अगर बच्चों के लिए कुछ रचनात्मक लेखन करता है तो वह भाषा की मर्यादा का ख्याल अवश्य रखेगा।

स्वयं प्रकाश अपनी रचनाओं में भाषा के सरल सुंदर और सहज रूप का उपयोग करते हैं और अपनी शब्द चयन में विशेष रूप से परिवेशगत दबाव और प्रभाव को अभिव्यक्त करने की कोशिश करते हैं उनकी कहानियां का कथानक संक्षिप्त होता है परंतु शब्दों और मुहावरों के जरिए वह अपनी बात को बहुत प्रभावी ढंग से अपने पथ को तक पहुंचा देते हैं।

स्वयं प्रकाश अपनी कहानियों में समकालीन लेखन से अलग शैली का उपयोग करते हैं। कहानी कहने की नितांत निजी विशिष्टता स्वयं प्रकाश के पाठकों को एक अलग तरह का सुख देती है। इस शैली का स्रोत चाहे जो भी हो पर कहानी पढ़ने वाले को लगता है कि जैसे वह कथाकार के मुँह से कहानी सुन रहा है। जनपक्षधरता स्वयं प्रकाश के कहानी लेखन की आत्मा है।इसके लिए अगर वे लोकभाषा का उपयोग करते हैं तो यह स्वाभाविक ही है।

स्वयं प्रकाश का मानना है कि कथाकार के समक्ष इस बात की चुनौती हमेशा रहती है कि जो वह लिख रहा है उसका चित्र उसके पाठक के समक्ष बन जाए। आजकल प्रयोग में लाई जाने वाली भाषा का जो रूप हम देखते हैं स्वयं प्रकाश ने उसी भाषा को अपनी कहानियों में स्थान दिया है। स्वयं प्रकाश जिस तरह मैं बोलता हूँ उस तरह तू लिख और उसके बाद भी मुझसे बड़ा तू दिख वाले सिद्धांत पर चलने वाले कथाकार हैं। अपने एक साक्षात्कार में वे साफ साफ स्वीकार करते हैं कि सरल भाषा में लिखना अधिक कठिन काम है।

स्वयं प्रकाश ने अपनी कहानियों में जिस भाषा का प्रयोग किया है वह सरल और सहज है। उनकी कुछ कहानियों को उदाहरण के लिए देखा जा सकता है। कथा संग्रह 'नीलकांत का सफर' में संग्रहीत उनकी कहानी 'नीलकांत का सफर' की आरंभिक पंक्तियों को देखिए-

"नीलकांत सफर कर रहे थे। चूंकी वह जनता थी इसलिए थर्ड-क्लास में सफर कर रहे थे और चूंकी वह थर्ड-क्लास था अतः इसलिए ट्रेन के आखिरी डिब्बे का आखिरी कम्पार्टमेंट था।बाकी ट्रेन या तो फर्स्ट क्लास थी या शयनयान या आरक्षित या और कुछ। लगता था कि साधारण वर्ग के इस कम्पार्टमेंट को भी पीछे ही पीछे दयावश या औपचारिकता निभाने के लिए जोड़ दिया गया हो।"[4]

'पार्टीशन' शीर्षक कहानी में सांप्रदायिकता को उठाया गया है उसमें ऐसे शब्दों का उपयोग किया गया है।

"एक नए किस्म का लौडपन उन पर चढ़ने लगा"

"क्या हुआ रे गोम्या, गोम्या बोला म्हने कूटे!

ये मियों"[5]

"सामने की तरफ से फिर कुछ चिल्लाहट और कोसने सुनाई दिए- ओ माँSरीS... अरे मरी रे...ओ गुखाण्या! लाकड़याका! भोसड़ीचोदरा! अरे मारया रे! अरे मार नाख्यो रे! अरे माँS री!"[6]

और एक मिडवाइफ उसे फटकार रही थी "जब अंदर ले रही थी तब नहीं सोचा था कि कुछ बाहर भी निकलेगा? उस वक्त तो टिचकारियां मार रही होगी! और जाएगी मरद के पास!"[7]

स्वयं प्रकाश अपनी कहानियों के बारे में स्वयं लिखते हैं कि-

"ये कहानियां चीखती-चिल्लाती नहीं,फुसफुसाती हैं। और अक्सर तो वह भी नहीं, वे सिर्फ एक वातावरण निर्मित करती हैं और आप समझ जाते हैं कि क्या कहना चाहती हैं"।[8]

स्वयं प्रकाश ने अपनी कहानियों में मुहवरों का प्रयोग यथा-स्थान किया है। इनकी भाषा शैली पाठक को सीधे-साधे अपने आस-पास के वातावरण से जोड़ता है। स्वाद कहानी में वे आरंभ की पंक्तियों में लिखते हैं कि "बिल्ली के गू, न लीपने के न पोतने के। लेंडी की तरह झुककर जमीन से फाइल उठा ली और सिर झुकाकर बाहर चले गए।"[9]

"अब कम्प्यूटर तो न क्वार्टर मांगेगा, मेडिकल न एल.टी.सी। बलिहारी इस ग्लोबलाइजोशन की। हर उल्लू का पठ्ठा यही समझ रहा है कि वह जापान या कोरिया की किसी फर्म के कॉरपोरेट ऑफिस में बैठा है।"[10]

"घड़ी-घड़ी पुट्ठे उठाकर पादते हैं और जोर से लंबा सारा"[11]

इस तरह के वाक्यों से कहानी में हास्य की स्थिति बनती है परंतु विषय की गंभीरता पर कोई भी प्रभाव नहीं पड़ता। अपनी कहानियों में स्वयं प्रकाश छोटे-छोटे वाक्यों से कहानी आरंभ करते हैं।

एक यूं ही मौत शीर्षक इनकी कहानी का आरंभ उदाहरण के लिए लिया जा सकता है-

"और एक दिन वह मर गया। पता नहीं कैसे। रात को सोया और उठा नहीं बस।"[12]

इसके बाद वे दूसरे पैराग्राफ में मरे हुए व्यक्ति का परिचय कुछ इस तरह से करवाते हैं कि पाठक को लग जाता है कि वह जो मरा है कितना साधारण और मामूली इंसान रहा होगा-

"उसने जिंदगी में कभी रेलवे का टाइम-टेवल नहीं खरीदा, कभी ट्रेवलर्स चेक नहीं बनवाया, बीमा नहीं करवाया, लॉटरा नहीं लगाई, हवाई यात्रा नहीं की, हॉट-डॉग या हैम्बरगर नहीं खाया, शैम्पन या हिरोईन नहीं पी, ब्लू फिल्म नहीं देखी, वोट नहीं दिया, और कमोड पर बैठकर हगा नहीं।"[13]

स्वयं प्रकाश ने अपनी कहानियों में मुहवरों का प्रयोग यथा-स्थान किया है। इनकी भाषा शैली पाठक को सीधे-साधे अपने आस-पास के वातावरण से जोड़ता है। स्वाद कहानी में वे आरंभ की पंक्तियों में लिखते हैं कि "बिल्ली के गू, न लीपने के न पोतने के। लेंडी की तरह झुककर जमीन से फाइल उठा ली और सिर झुकाकर बाहर चले गए।"[8]

इस तरह हम देख सकते हैं कि स्वयं प्रकाश और असगर वजाहत अपनी कहानियों में भाषाई गरिमा और सामाजिक मुहावरों को पकड़ने का सफल प्रयास करते हैं। दोनों कहानीकोरों की भाषा मध्यवर्ग की भाषाई स्थिति और समझ को दर्शाती हैं।

संदर्भ

1. मेरी प्रिय कहानियाँ- भूमिका, राजपाल प्रकाशन
2. मैं हिंदू हूँ - 'शाह आलम कैंप के रूहें' पृष्ठ-147
3. मेरी प्रिय कहानियाँ- असगर वजाहत
4. स्वयं प्रकाश, नीलकांत का सफर कहानी संग्रह, पृष्ठ संख्या-86
5. पार्टीशन- स्वयं प्रकाश, नीलकांत का सफर कहानी संग्रह, पृष्ठ संख्या- 21
6. अगले जनम- स्वयं प्रकाश, नीलकांत का सफर कहानी संग्रह, पृष्ठ संख्या-84
7. स्वयं प्रकाश, नीलकांत का सफर कहानी संग्रह, पृष्ठ संख्या-86
8. भूमिका- स्वयं प्रकाश प्रतिनिधि कहानियां,पृष्ठ संख्या-9
9. स्वाद- स्वयं प्रकाश प्रतिनिधि कहानियां,पृष्ठ संख्या-16
10. स्वाद- स्वयं प्रकाश प्रतिनिधि कहानियां,पृष्ठ संख्या-17
11. स्वाद- स्वयं प्रकाश प्रतिनिधि कहानियां,पृष्ठ संख्या-18
12. एक यूँ ही मौत- स्वयं प्रकाश प्रतिनिधि कहानियां,पृष्ठ संख्या-23
13. एक यूँ ही मौत- स्वयं प्रकाश प्रतिनिधि कहानियां,पृष्ठ संख्या-26